हिंदी फिल्म किसी से न कहना.... बहुत कुछ कहता है समाज से।

लॉकडाउन के दूसरे चरण में एक पुरानी फ़िल्म देखने का मौका मिला। फारुख शेख, दीप्ति नवल, जाफरी व उत्तपल दत्त अभिनीत फिल्म किसी से न कहना।

इस फ़िल्म में कई ऐसी बिंदुएं हैं जिन पर चर्चा की अपार संभावनाएं हैं। कहानी, कथानक, संवाद, मूल विषय से अतिरिक्त इस विषय की ओर भी हमारा।ध्यान आकृष्ट करती है कि बदलते एवं भाषायी व जीवन स्तर के विकास की पटरी पर सरपट दौड़ते भारत में कितना बदलाव आया है ? हास्य के नाम पर अश्लीलता व कहानी के नाम पर ढाई घण्टे का चलचित्र जिसे पॉपकॉर्न और कोका कोला की घूंट के साथ निगलता हुआ दर्शक यह सोच ही नहीं पा रहा कि आंख, कान व मुंह के रास्ते शरीर व मस्तिष्क में जा रहे मल का क्या प्रभाव पड़ेगा ? दर्शक ऐसे मल में इस कदर डूबा दिया गया है कि वह शांतचित्त, सुशील होने की जगह पर ऐसा कूल बनने का प्रयास कर रहा है जिसकी कोई तय परिभाषा ही नहीं है। आंख व कानों के रास्ते अंदर आती अश्लीलता उसके मस्तिष्क में इस तरह परत बना चुकी है कि वह अब इस अवस्था में ही नहीं है कि विचार कर सके कि हास्य के लिए अश्लीलता की आवश्यकता क्या है और कितना उचित है।

फ़िल्म के बारे मे चर्चा की शुरुआत करूँगा डायलॉग में प्रयुक्त किए गए एक शब्द से जो है ममिया ससुर। ममिया ससुर यानि पत्नी के मामा। अचंभित करने वाली बात यह है कि वर्तमान में जो शब्द सामान्य जीवन की आम बोलचाल की भाषा में भी गौण हो रहा है वह कभी मुंबइया फ़िल्म में डायलॉग के रूप में प्रयोग हो रहे थे। फ़िल्म में जिस पात्र ने इस शब्द का प्रयोग किया है वह एक धनाढ्य व्यक्ति है और उसकी भांजी डॉक्टर है। फ़िल्म के नौजवान कलाकार जिसे आजकल हीरो के रूप में स्थापित कराया जाता है वह उस व्यक्ति के कार्यालय में नौकरी करता है। कोठी में रहने वाले पात्र की शब्दावली का ध्यान तो निर्देशक ऋषिकेश मुखर्जी व डायलॉग लेखक राही मासूम रजा को होगा ही। इसके बाद भी यदि फ़िल्म में ऐसे शब्द प्रयोग में लाए गए तो निश्चित ही उस कालखण्ड को हिंदी सिनेमा का स्वर्णिम काल कहा जाना चाहिए। वर्तमान में हिंदी सिनेमा में अंग्रेजी व अंग्रेजियत ने इस प्रकार अतिक्रमण कर लिया कि पर्दे पर पड़ते प्रकाश से उभरती चित्रों में नग्नता ही नजर आती है जो व्यक्ति को उत्थान की ओर ले जाने के विपरीत पतन वाली खाई में धकेलती जा रही है।
आभासी दुनिया की धुंध में खोया वर्तमान फ़िल्म जगत खुद को उस स्थान पर स्थापित करने का प्रयत्न कर रहा है जो अस्तित्व में है ही नहीं। भावशून्य मुखमण्डल पर कृत्रिम आभा व डायरेक्टर द्वारा बार बार

गालियां दिए जाने के बाद चुराए हुए एवं बनावटी भाव को प्रदशित करने के निरर्थक प्रयास करने वाला फ़िल्मकर्मी जिसे अदाजार या एक्टर अथवा अदाकारा या एक्ट्रेस बता चिथड़े अर्द्ध नग्न कपड़ों के साथ परोसा जा रहा है, को ज्ञात ही नहीं है कि उसकी भूमिला क्या है ? उसका इस फ़िल्म से रिश्ता कुछ पन्नों पर अंकित स्क्रिप्ट माते से ही है जिसे रट कर वह कैमरे के सामने उल्टियां कर रहा है। वह यह नहीं जानता कि उसका संबन्ध दर्शकों से है भी या नहीं ? उसे यह भी ज्ञात नही है कि दर्शकों के प्रति उसकी जिम्मेवारी है क्या ? सिनेमा समाज का आईना है तो इस आईने के होने अथवा न होने का औचित्य फ़िल्म के निर्माण में लगे सदस्यों जिसमे निर्माता से लेकर निर्देशक तक अदाकार से लेकर लेखक तक आआते हैं को ज्ञात ही नहीं है।

सिनेमा सिर्फ समाज के मनोरंजन की वस्तु न होकर समाज मे सुधार का एक तंत्र भी है यह भारतीय फिल्म जगत भूल चुका है। वैश्वीकरण का प्रभाव या अपराध की दुनिया का काला धन फ़िल्म को पैसा कमाने का पेशा बनाने के साथ साथ दुर्गंध देते वैचारिक आतंकवाद के प्रचार प्रसार का माध्यम बन गया है। जिसका दो ही ध्येय नजर आता है काला धन को सफेद करना व भारतीय संस्कारों के प्रति वितृष्णा पैदा करना।

फ़िल्म में कोई हास्य सीन न होने के बाद भी हास्य की भरपूर मात्रा है। दर्शकों को हँसाने के लिए हास्य सीन डालने का प्रयास नहीं किया गया जैसे आज की फिल्मों में होता है। इस फ़िल्म की खासियत ही यही है कि हास्य कहानी से स्वत: उतपन्न होते हैं। हास्य कहानी से साथ साथ चलता है। इसके लिए अत्यधिक नाटकीय उपक्रम की आवश्यकता नहीं पड़ती। वर्तमान काल में बन रही फिल्मों के निर्माता निर्देशकों ने यह मान लिया है कि हास्य के लिए अभद्रता एवं अश्लीलता ही मुख्य तत्व है। हास्य फिल्मों का हाल भी डरावनी जैसा होता जा रहा है जिसमें प्रेतात्मा महिला ही होती है और इस पात्र के लिए अदाकारा के चयन की पहली शर्त है उसके कामुकता के पूर्ण प्रदर्शन की क्षमता। ऐसा प्रतीत होता है कि फ़िल्म निर्देशकों को जितनी भी प्रेतात्माओं से भेंट हुई वे सब के सब अपनी शारिरिक सुख पाने की तड़प लिए भटक रही है। इन प्रेत आत्माओं की पहली आवश्यकता मोक्ष न होकर चरमसुख की पिपासा को मिटाना है। फिल्में यह अवधारणा बनाने का प्रयास कर रही है कि आत्मा यौवन मानव शरीर छोड़ते ही शारीरिक क्षमता व वैवाहिक सुख की गारंटी देने वाले कैप्सूल खा लेती है और शारीरिक भूख मिटाने के लिए गठीले अथवा सुडौल शरीर की तलाश में लग जाती है।

किसी से न कहना फ़िल्म की कथा के मूल में है अंग्रेजियत का समाज में पड़ता दुष्प्रभाव। कथानक के माध्यम से फ़िल्म यह बताने में सफल भी है कि अंग्रेजियत का प्रभाव युवा पीढ़ी को न केवल भारतीय मूल्यों से विमुख कर रहा है अपितु उसे संस्कारहीन भी बना रहा है। प्रसार प्रचार द्वारा आरोपित जानकारियों को जानने वाला अंग्रेजियत की गुलाम पीढ़ी उन लोगों को बेवकूफ ग्वार मान रही है जो उनकी जानकारियीं यथा अंग्रेजी गानें, फिल्में, साहित्य अथवा प्रसिद्ध व्यक्ति के बारे में नहीं जानते। जबकि अंग्रेजियत को अपने उर लतादे यह पीढ़ी खुद भी बेवकूफ और मूर्ख है क्योंकि उसे भी भारतीय परंपरा संस्कृति, पौराणिक कथाओं का ज्ञान नहीं है। दोनो तरफ की परिधि है और कूप मेढ़क दोनो ही है। यही हाल भारत के साहित्यिक समाज का है। साहित्य के वाम झंडे ढोने वालों में कूप मेढ़क की प्रवृति ज्यादा है। किंतु इससे भी घातक यह है कि इन्हें दक्षिण अथवा राष्ट्रवादी साहित्य का तनिक भी अथवा कटा छंटा ज्ञान होने के बाद भी खुद को पढ़ लिखा ज्ञानी होने का कूप मेढकीय ज्ञान है। एक पक्ष को पढ़

कर उसे आभास हो जाता है कि उसने बहुत पढ़ लिया। इसी भ्रम में अंग्रेजियत की लत से ग्रसित युवा पीढ़ी भी खुद के आधुनिक होने के भ्रम में खुद का ही अहित कर रहा है।

मुख्य पात्र उत्पल दत्त के अनुभवों में यह प्रदशित होता है कि अंग्रेजी भाषा ने हमें हमारी जड़ों से दूर कर दिया है। अग्रजों के साथ व्यवहार की शिक्षा निज भाषा से ही संभव है क्योंकि भाषा तय परिभाषा के अधीन अपनी भावनाओं को व्यक्त करने का साधन है। भावना मूल है। भावना ही तय करती है कि देखी गई वस्तु में क्या दिख रहा है ? वृध्द को युवती बेटी दिख रही है या एक मौका अथवा युवती को वृद्ध में पिता दिख रहे हैं या तन छूने को लालायित कोई बेकल मनुष्य।
फ़िल्म अंत में यह स्थापित करने में सफल हो जाता है कि अंग्रेजी पढ़ी लिखी सभी लड़कियां संस्कारहीन नहीं होती अपितु परिवार व व्यक्ति पर भी निर्भर करता है कि अब अंग्रेजी अपना रहा है या अंग्रेजियत।

फ़िल्म हास्य फिल्मों में रखा जा सकता है और पूर्ण पारिवारिक फ़िल्म है।

लेखक
अमित श्रीवास्तव, व्यंग्यकार व विश्लेषक हैं।
केंद्रीय विद्युत विनियामक आयोग में कार्यरत हैं ।
राष्ट्रीय न्यास परिषद द्वारा प्रकाशित कहानी संग्रह में कहानी प्रकाशित।
व्यंग्ययात्रा, अट्ठहास समेत कई प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में व्यंग्य प्रकाशित।
निवास- नई दिल्ली।
संपर्क सूत्र- 9555018954
amaramit.shrivastava@gmail.com